मंथन कमांक 23

मौलिक अधिकार और वर्तमान भारतीय वातावरण

दुनियां में प्रत्येक व्यक्ति के तीन प्रकार के अधिकार होते हैं– (1) मौलिक अधिकार (2) संवैधानिक अधिकार (3) सामाजिक अधिकार । मौलिक अधिकार को ही प्राकृतिक, मानवीय या मूल अधिकार भी कहते हैं। व्यक्ति के वे प्रकृति प्रदत्त अधिकार जिन्हें राज्य सहित कोई भी अन्य उसकी सहमति के बिना तब तक कटौती नहीं कर सकता जब तक उसने किसी अन्य व्यक्ति के वैसे ही अधिकारों का उल्लंघन न किया हो, उन्हें मौलिक अधिकार कहते हैं। मौलिक अधिकार प्रकृति प्रदत्त होते हैं, संविधान प्रदत्त नहीं। संविधान तो व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा की गारण्टी मात्र देता है।

मौलिक अधिकार सिर्फ एक ही होता है और वह होता है प्रत्येक व्यक्ति की असीम स्वतंत्रता। मौलिक अधिकार की कोई सीमा नहीं होती। अपने अधिकारों की सीमा व्यक्ति स्वयं तय करता है। इन अधिकारों की सीमा वहॉ तक होती है जहॉ से किसी अन्य की स्वतंत्रता की सीमा प्रारंभ होती हो। यदि किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता किसी अन्य की स्वतंत्रता में बाधक होती है तब संविधान या समाज इसमें हस्तक्षेप करता है, अन्यथा नहीं। मौलिक अधिकारों के चार भाग होते हैं–(1) जीने का अधिकार (2) अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (3) सम्पत्ति (4) स्वनिर्णय। ये चारों अधिकार सिर्फ व्यक्तिगत ही होते है, सामूहिक नहीं होते। ये अधिकार अहस्तांतर्णीय भी होते है अर्थात किसी अन्य के मौलिक अधिकारों का उपयोग कोई अन्य नहीं कर सकता। इस तरह व्यक्ति को किसी भी मामले में अपने विचार रखने का अधिकार मौलिक अधिकार है। किन्तु वह अधिकार किसी अन्य व्यक्ति पर प्रभाव नहीं डाल सकता। व्यक्ति को विचार अभिव्यक्ति तक ही स्वतंत्रता है किन्तु यदि कोई अभिव्यक्ति विचार प्रचार की दिशा में बदल जाती है तो वह संवैधानिक या सामाजिक अधिकार स्वरुप ग्रहण कर लेती है। कोई भी किया विचार अभिव्यक्ति में नहीं शामिल होती। इस तरह नारे लगाना जुलूस निकालना विचार अभिव्यक्ति का भाग नहीं है । क्योंकि वह समूहगत है, विचार प्रचार है तथा दूसरों की स्वतंत्रता का हनन भी है।

प्रत्येक व्यक्ति का यह स्वभाव होता है कि वह स्वयं तो अधिक से अधिक स्वतंत्रता चाहता है किन्तु दुसरों को अपनी इच्छानुसार संचालित होते हुए देखना चाहता है । यहीं से विवाद शुरु होता है। एक व्यक्ति शराब पीकर अपना और अपने परिवार का नुकसान कर रहा है। तो उसका पडोसी उसे बलपूर्वक इस नुकसान से रोकना अपना अधिकार समझता है। वह पडोसी यदि यज्ञ करता है और शराबी यह कहकर यज्ञ में बाधा पहुचाता है कि वह भूखा है और पडोसी घी तेल जला रहा है तब भी पडोसी उस शराबी को ही गलत कहता है क्योंकि शराब पीना बुरा है और यज्ञ करना अच्छा। ये दोनों ही नियम पडोसी ने बनाये हैं और दोनों में शराबी की सहमति नहीं है। मेरे विचार में यह व्यवस्था उस शराबी के स्वनिर्णय के मौलिक अधिकार का उल्लंघन है। आप उस शराबी को समझा सकते है, बहिष्कार कर सकते है किन्तु आप उसकी स्वतंत्रता में बाधा नहीं पहुचा सकते। आज ऐसा दिखता है कि सरकार तो अधिकांश मामलों में व्यक्ति के स्वनिर्णय के तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन करने के कानून बनाती ही है, कभी–कभी सामाजिक व्यवस्थाएँ भी ऐसा अतिक्रमण करने लगती है।

पांच प्रकार के कार्य ही मूल अधिकारों का उल्लंघन करते हैं–(1) चोरी, डकैती, लूट (2) बलात्कार (3) मिलावट, कमतौलना (4) जालसाजी, धोखाधडी, छलकपट (5) हिंसा, बलप्रयोग, आतंक। कोई छठवा कार्य ऐसा नहीं होता जिसे अपराध कहॉ जा सके। यदि कोई व्यक्ति इन पांच कार्यो से बच जाता है तो वह किसी के मौलिक अधिकार का उल्लंघन नहीं करता और उसे अपराधी नहीं कहा जा सकता।

दुनियां में मौलिक अधिकार के संबंध में दो प्रकार के समूह है – (1) हम लोग जो मौलिक अधिकार को प्राकृतिक अधिकार मानते है और (2) वे लोग जो मौलिक अधिकार को संवैधानिक या सामाजिक अधिकार मानते है। साम्यवादियों को छोडकर अन्य सभी हिन्दू या इसाई हमारी विचारधारा के पक्षधर माने जाते है। तो साम्यवादी तथा कुछ मुसलमानों को छोडकर अन्य मुसलमान दूसरी विचारधारा के माने जाते है। दोनो विचारधाराओं के बीच टकराव लम्बे समय से चल रहा है। पहली विचारधारा मानने वाले देशों में लोकतंत्र है तो दूसरी विचारधारा मानने वालों में अधिकांश तानाशाही है। भारत में लोकतंत्र है किन्तु भारत की राजनैतिक व्यवस्था में 70 वर्षो तक दूसरे प्रकार के लोगों का अधिक प्रभाव रहा । अब मोदी के बाद हम लोगों का प्रभाव बढना शुरु हुआ है।

प्रत्येक व्यक्ति का एक ही सामाजिक दायित्व होता है और वह होता है सहजीवन अर्थात स्वयं सहजीवन का पालन करना और दूसरों को सहजीवन की ट्रेनिंग देना। कोई भी व्यक्ति अकेला न होकर परिवार, गॉव से लेकर समाज रुपी संगठन का सदस्य होता है। व्यक्ति जब परिवार का सदस्य होता है तब उसके मौलिक अधिकार तब तक निष्क्रिय हो जाते है जब तक वह उस परिवार का सदस्य है। इसका अर्थ हुआ कि परिवार में रहते हुए अपनी पारिवारिक सीमा के अंदर भी कोई व्यक्ति अपने मौलिक अधिकारों का प्रयोग नहीं कर सकता जब तक परिवार की सहमति न हो। इसे हम इस प्रकार भी कह सकते है कि परिवार के प्रत्येक सदस्य के मौलिक अधिकार परिवार रुपी संगठन के पास अमानत के रुप में सुरक्षित रहते हैं जिनका उपयोग वह परिवार छोडने का

निर्णय करके ही कर सकता है ,अन्यथा नहीं। यही मान्यता गॉव राष्ट्र या अन्य संगठनों के साथ भी उसकी होती है। सामान्यतया मौलिक अधिकार व्यक्ति के पास एक सुरक्षा कवच या हैंडब्रेक के समान होते है जो आपातकालीन तथा विशेष परिस्थिति में ही उपयोग किये जा सकते है अन्यथा नहीं। इसका अर्थ हुआ कि मौलिक अधिकार की शायद ही कभी उपयोग करने की आवश्यकता पडती हो अन्यथा वे व्यक्ति के पास निष्क्रिय कवच के रुप में सुरक्षित रहते हैं। जो व्यक्ति बार–बार मौलिक अधिकार की दुहाई देता है या उपयोग करता है वह आदमी अच्छा नहीं माना जाता। इसी तरह की विशेष परिस्थिति में व्यक्ति को बलप्रयोग का भी अधिकार प्राप्त है। उसके लिए भी तीन परिस्थितियॉ आवश्यक हैं–(1) आपके मौलिक अधिकार का उल्लंघन होता हो (2) आपको न्याय प्राप्ति का कोई अन्य मार्ग उपलब्ध न हो (3) उस परिस्थिति से बच निकलने का कोई अन्य तरीका आपके पास न हो। यदि इन तीनों के अतिरिक्त आपने किसी अन्य आधार पर बल प्रयोग किया तो वह आपका अपराध माना जायेगा। दुर्भाग्य से हमारे संविधान निर्माताओं को इस बात का ज्ञान नहीं था कि मौलिक अधिकार की परिभाषा क्या है, इसलिए उन्होंने कुछ मौलिक अधिकारों को बाहर कर दिया। तो कुछ अनावश्यक अधिकारों को मौलिक अधिकार में शामिल कर लिया। आज अनेक नासमझ रोजगार, भोजन, शिक्षा, स्वास्थ, मतदान आदि को भी मौलिक अधिकार कहते फिरते हैं तो कुछ लोग धर्म आदि को मौलिक अधिकार में गिनते है। ये सब मौलिक अधिकार नहीं है ये या तो स्वनिर्णय के अन्तर्गत आते है या संवैधानिक अधिकारों के।

सहजीवन व्यक्ति के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता है । भारत में तीन संगठन ऐसे माने जाते है जो मौलिक अधिकारो को नहीं मानते । वे या तो राज्य को बडा मानते है या धर्म को या राष्ट्र को। वे तीन साम्यवाद, संगठित इस्लाम और संघ परिवार हैं। ये तीनों ही अधिकारों की तो बहुत बात करते है किन्तु कर्तव्यों की नहीं करते। जबकि सहजीवन के लिए सिर्फ कर्तव्य ही कर्तव्य आधार होते है, अधिकार नहीं। साम्यवाद सबसे खतरनाक विचारधारा है और संगठित इस्लाम सबसे अधिक खतरनाक जीवन पद्धति किन्तु धार्मिक इस्लाम नहीं। कोई भी साम्यवादी कभी सहजीवन के सिद्धांत को नहीं मानता। जहॉ वह अल्पमत में होगा वहॉ स्वतंत्रता की मांग करेगा और जहॉ बहुमत में होगा वहॉ सबकी स्वतंत्रता छीन लेगा। भारत का हर साम्यवादी पग–पग पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करता दिखता है किन्तु कोई भी साम्यवादी चीन या रुस में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की वकालत नहीं करता। साम्यवाद की आंतरिक व्यवस्था में कोई साम्यवादी को प्रत्यक्ष रुप से कितनी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है यह सब जानते है। भारत के साम्यवादी लोकसभा अध्यक्ष की दुर्गति भी हमने देखी है। इसी तरह इस्लाम में भी जो लोग संगठित इस्लाम से जुडे हुए है वे भी कभी सहजीवन को स्वीकार नहीं करते। टी.बी बहस में ऐसे अनेक दाढी वाले मुल्ला बैठकर अपनी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और धार्मिक स्वतंत्रता की दुहाई देते है किन्तु कभी पाकिस्तान में धार्मिक स्वतंत्रता की चर्चा नहीं करते। कभी ये मुल्ले यह नहीं कहते कि इस्लाम में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता किस सीमा तक है। आजकल कॉलेजों में यह साम्यवादी और कट्टरपंथी इस्लाम का गठजोड जिस तरह मौलिक अधिकारों की बात कर रहा है इससे ऐसा लगता है कि अब उनके अंत का समय आ गया है। अब भारत का आम नागरिक यह समझ गया है कि इन दोनों को सहजीवन सीखने के लिए मजबूर करना आवश्यक है। यही कारण है कि भारत का आम नागरिक संघ परिवार को एक बुराई समझते हुये भी शत्रु का शत्रु मित्र होता है के समान प्रिय लगने लगा है।

मैं मानता हूॅ कि वर्तमान परिस्थितियों में संघ परिवार जो कुछ कर रहा है वह ठीक है। फिर भी मुझे लगता है कि संघ परिवार को शाहरुख खान, आमिर खान, प्रशांत भूषण सरीखे मध्यमार्गियों के साथ अच्छा व्यवहार करना चाहिए। हरमिंदर कौर के कथन का दिया गया उत्तर तो उत्तर दाता की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मानी जा सकती है किन्तु हरमिंदर कौर का विरोध किसी भी रुप में उचित नहीं कहा जा सकता । इस घटना ने हरमिंदर कौर के प्रति समाज में सहानुभूति का भाव पैदा किया है। साक्षी महराज भी जब भी बोलते है तो वह भाषा कट्टरपंथी मुसलमानों से ही मेल खाती है किन्तु वर्तमान में उन्होंने जनसंख्या नियंत्रण समान नागरिक संहिता अथवा कब्रगाह की भूमि के मामले में जो कुछ कहा वह विचार करने योग्य है। यदि हम भारत की राजनैतिक स्थिति का ऑकलन करे तो भारत मौलिक अधिकारों की सुरक्षा की दिशा में निरंतर आगे बढ रहा है। अब साम्यवादी और कट्टरपंथी मुसलमानों का प्रभाव घट रहा है। देश की राजनीति में नरेन्द्र मोदी, नीतिश कुमार, अखिलेश यादव प्रमुख राजनैतिक प्रतिद्वंदी के रुप में आगे आ रहे है। अरविंद केजरीवाल समेत अन्य सभी नेता पिछडने की दिशा में है। स्पष्ट है कि मौलिक अधिकारों के मामले में भारत की प्रगति संतोषजनक है। संघ परिवार से भी भविष्य में कोई खतरा नहीं है क्योंकि हिन्दुओं ने भले ही वर्तमान खतरे को टालने के लिए संघ परिवार को ढाल बनाया हो किन्तु खतरा टलते ही आम भारतीय सहजीवन को अपना मार्ग बना लेगा ऐसा विश्वास है। साम्यवाद तो अपनी बुरी स्थिति देखकर कट्टरपंथी इस्लाम के कंधे पर बंदूक रख चुका है। अब इस्लाम को समझना है कि वह मौलिक अधिकारों की धारणा को स्वीकार करता है या अपने समापन का मार्ग प्रशस्त करता है । इसका निर्णय इस्लाम को करना है किसी अन्य को नहीं। या तो इस्लाम अपने कठमुल्लों का साथ छोडकर धार्मिक इस्लाम और सहजीवन की ओर बढेगा और या समाप्त होगा। दुनियां में और विशेषकर भारत में मौलिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए ये संभावनाए और आवश्यकताए स्पष्ट दिखती है।

1. प्रश्न–एक प्रश्न हुआ है कि आजकल मुस्लिम पर्सनल लॉ की बहुत चर्चा है तो मुस्लिम पर्सनल लॉ में सरकार कोई संशोधन कर सकती है,या नहीं?

उत्तर– मेरे विचार से किसी भी व्यक्ति के व्यक्तिगत कानून में कोई भी सरकार कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकती। जब तक उसका वह कानून स्वयं के अतिरिक्त किसी दूसरे पर उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई प्रभाव न डालता हो। विवाह या तलाक आपसी सहमति से होते हैं। इसमें सरकार कोई कानून नहीं बना सकती। या तो ये व्यक्तिगत मामले हैं या सामाजिक। कोई व्यक्ति आपसी सहमति से चार विवाह करे या सौ करे इससे किसी अन्य को क्या लेना देना है। कोई व्यक्ति किसी के साथ न रहना चाहे तो कानून उसे साथ रहने के लिए कैसे बाध्य कर सकता है। यदि कोई मुस्लिम महिला अपने पति को एक ही बार में तलाक दे दें तो क्या उसे जबरन या कानून के द्वारा वहॉ पति के पास रहना पडेगा। कोई भी व्यक्ति किसी के साथ आपसी सहमति के आधार पर रहने के लिए या अलग होने के लिए स्वतंत्र है जब तक कोई समझौता न टूटता हो। यदि कोई समझौते का उल्लंघन होता है तो कानून यह समीक्षा करने का अधिकार रखता है कि समझौता स्वतंत्र था या नहीं अथवा समझौता किसी मौलिक अधिकार के विरुद्ध तो नहीं था। मैं समझता हूॅ कि हमारा संविधान यह समझता ही नहीं कि व्यक्तिगत मामलों में संविधान को हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है। यही स्वतंत्रता मुसलमान के लिए भी है और हिन्दू के लिए भी।

हम मौलिक अधिकार और सहजीवन पर शनिवार से लगातार विचार मंथन कर रहे है। कुछ प्रश्न आये है जिनका सामूहिक स्पष्टीकरण उचित प्रतीत होता है।

मौलिक अधिकार और सहजीवन एक दूसरे के पूरक होते हैं। दोनों में संतुलन और समन्वय अनिवार्य है। जब व्यक्ति को यह विश्वास हो कि उसके मौलिक अधिकार सुरक्षित रहेंगे तो उसे कभी अपनी स्वतंत्रता की चिंता नहीं करनी चाहिए। किन्तु यदि राजनैतिक व्यवस्था ठीक न हो तब ऐसी व्यवस्था को ठीक करने का प्रयास करना चाहिए और यदि बिल्कुल ही असंभव हो जाये तभी ऐसी विशेष परिस्थिति में अपने मौलिक अधिकारों की सुरक्षा की चिंता करनी चाहिए अन्यथा व्यक्ति को कभी भी अपने अधिकारों की चिंता नहीं करनी चाहिए। स्वतंत्रता प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है और सहजीवन कर्तव्य। अधिकार का उपयोग आपातकालीन परिस्थितियों में करना चाहिए अन्यथा सामान्यतया कर्तव्य ही पर्याप्त है। हमारे मित्र प्रमोद कुमार जी वात्सल्य ने तो जीवन भर कर्तव्य की ही प्रेरणा दी है।

व्यक्ति की स्वतंत्रता को भारत में व्यक्ति से खतरा कम होता है,समाज से आंशिक होता है,और सरकार से अधिक। व्यक्ति अगर स्वतंत्रता का उल्लंघन करें तो सरकार रोक सकती है किन्तु यदि सरकार ही उल्लंघन करेगी तो कौन रोकेगा? वर्तमान समय में भारत में मौलिक अधिकारों का सर्वाधिक उल्लंघन तंत्र के द्वारा ही हो रहा है जिसमें न्यायपालिका भी शामिल है। विवाह, तलाक, भोजन, संतानोत्पत्ति, शिक्षा, रोजगार सहित सब प्रकार की स्वतंत्रता में सरकार के कानून बाधक बनते हैं। सहमत सेक्स के विषय में भी सरकार निरंतर दखल देती रहती है जबकि सहमत सेक्स व्यक्ति की असीम स्वतंत्रता है और उसे समाज सिर्फ अनुशासित कर सकता है शासित नहीं, बाधित नहीं। किन्तु शासन उसमें भी दखल देता रहता है। मालिक मजदूर संबंध, शोषण अथवा अन्य प्रकार के जनहित के नाम पर सरकारें लगातार मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करती हैं।

मौलिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए हजारों वर्ष पूर्व भारत सबसे उपयुक्त देश था। भारत में सामाजिक बहिष्कार को शस्त्र के रुप में उपयोग किया जाता था और किसी भी मामले में समाज द्वारा दण्ड देने पर प्रतिबंध था। दण्ड केवल राज्य ही दे सकता था। जब भारत गुलाम हुआ तो मुस्लिम संस्कृति ने बहिष्कार से आगे बढ़कर दण्ड देने की सामाजिक मान्यता शुरु कर दी। उसके बाद पश्चिम की सरकारें बनी तो दण्ड तो बंद हुआ ही किन्तु सामाजिक बहिष्कार को भी रोक दिया गया। स्वतंत्रता के बाद जब साम्यवाद प्रभावित विचारधारा की सरकार बनी तो और भी गडबड हो गया। यह सरकार तो समझती ही नहीं कि सरकार क्या है,परिवार क्या है,मौलिक अधिकार क्या है,और तंत्र की सीमाएॅ क्या है। ये तो तंत्र को एक प्रकार का तानाशाह मानने लगे है। किसी भी राजनैतिक व्यवस्था को सामाजिक व्यवस्था में तब तक कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक वह व्यवस्था किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता पर आकमण न करती हो। किन्तु भारतीय तंत्र व्यवस्था निरंतर ऐसा करती है।

जो भारत हजारों वर्ष पूर्व व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सहजीवन के तालमेल के लिए आदर्श माना जाता था वही भारत आज दुनियां में स्वतंत्रता और सहजीवन के तालमेल के लिए अंतिम पायदान तक गिर चुका है।

हमारी भारत की राजनैतिक व्यवस्था हर बात को स्वतंत्रता पर आक्रमण कहकर स्वतंत्रता का उलंघन करती है। यहॉ तक कि परिवार या संगठन छोडने या निकालने की स्वतंत्रता भी व्यक्ति या समाज को नहीं है। परिवार को इतनी भी छूट नहीं कि वह अपनी लडकी को मोबाईल का उपयोग करने से रोक सके और न मानने पर परिवार से अलग कर सके। मेरे विचार में सरकार ने ही भारत में सबसे अधिक मौलिक अधिकारों को नुकसान पहुॅचाया है। सामाजिक व्यवस्था में कानूनी हस्तक्षेप बहुत घातक है।

समाधान के रुप में समाज व्यवस्था को राज्य व्यवस्था से पूरी तरह हस्तक्षेप रहित होना चाहिए। इसी तरह व्यक्तिगत स्वतंत्रता में भी सरकारी कानूनों का हस्तक्षेप बंद होना चाहिए। यदि हम ठीक से ऑकलन करेंगे तो 95 प्रतिशत तक सरकारी कानून व्यक्ति के व्यक्तिगत और समाज की सामाजिक व्यवस्था में अनावश्यक हस्तक्षेप करते रहते हैं। ऐसे कानूनों के विरुद्ध देश में जनमत जागृत होना चाहिए। ज्यों ही सरकार अपना हस्तक्षेप हटाकर सारी शक्ति व्यक्ति की स्वतंत्रता की सुरक्षा में लगा देगी त्यों ही भारत का जनमानस अधिकारों की चिंता छोडकर कर्तव्य आधारित जीवन जीना शुरु कर देगा। हमारी भारतीय राज्य व्यवस्था को इस्लाम, साम्यवाद और पश्चिम की दूषित व्यवस्था की जगह भारत की आदर्श व्यवस्था का अनुशरण करना चाहिए।

मंथन कमांक 24

सुख और दुख

किसी कार्य के संभावित परिणाम का ऑकलन और वास्तविक परिणाम के बीच का अंतर ही सुख और दुख होता हैं। सुख और दुख सिर्फ मानसिक होता है। उसका किसी घटना से कोई संबंध नहीं होता जब तक उस घटना में उस व्यक्ति की स्वयं की भूमिका न हो। यदि ऐसी कोई भूमिका भी हो तो भूमिका के बाद संभावित परिणाम के ऑकलन और यथार्थ के बीच ही सुख और दुख होता है।

इस विषय को मैं कुछ वास्तविक घटनाओं से समझाता हूॅ। मेरे एक मित्र अपने लडके के विवाह के लिए लडकी तय करने गये। तय करके जब वापस लौट रहे थे तो बस एक्सीडेंट हो गई जिसमें दो तीन अन्य यात्री मर गये और मेरे मित्र को मामूली चोट आई। उन्होने वह रिश्ता यह कहकर तोड़ दिया कि आने वाली बहू के लक्षण ठीक नहीं हैं। रामानुजगंज वापस आने के बाद मैंने उस घटना को सुनकर उन्हें धन्यवाद दिया कि आपकी आने वाली बहु बहुत सुलक्षण है जिससे आप इतने गंभीर एक्सीडेंट में भी मामूली चोट से बच गये। उनकी भावना तुरन्त बदल गई और उन्होंने खबर भेजकर वह रिश्ता फिर से स्वीकार कर लिया। इसी तरह मेरे कई रिश्तेदार हैं जिनके विषय में मेरा अनुमान रहता है कि मेरे जाने पर किसका व्यवहार कैसा होगा। जिसके विषय में मेरा अनुमान रहता है कि वे खडे होकर हाथ जोडकर स्वागत करेंगे। वे अगर बैठे रहे तो मुझे दुख होता है । दूसरी ओर जिनके विषय में मैं अनुमान करता हूॅ कि वे बैठे–बैठे ही इशारे से ही सम्मान करेंगे वे यदि बैठे–बैठे भी हाथ जोडकर मेरा सम्मान करें तो मैं प्रसन्न हो जाता हूॅ। मेरे परिवार में कई लोग है। एक सदस्य किसी स्टाफ को बहुत डाटकर बोलता है और उसे दुख नहीं होता क्योंकि वह जानता है कि उनकी ऐसी ही आदत है। दूसरी ओर मैं किसी को कभी नहीं डाटता। यदि उसी व्यक्ति को मैंने सिर्फ यह कह दिया कि उसने गम्भीर गलती की है तो वह दिन भर खाना नहीं खायेगा। स्पष्ट है कि किसी घटना से होने वाले परिणाम का संभावित ऑकलन ही सुख और दुख का आधार होता है। मेरे उस स्टाफ का अलग–अलग ऑकलन उसके अलग–अलग सुख–दुख का आधार बना।

मेरे एक मित्र बरियों में रहते है। जब मिलते है तो इस बात से दुखी रहते है कि सब कुछ बिगड गया है। उनके लडके भी अलग रास्ते पर चलने लगे है और उनकी नहीं सुनते। वे सम्पूर्ण समाज व्यवस्था को भी बहुत गिरी हुई मानते हैं। मेरे परिवार के एक बडे बुजुर्ग भी लगभग इसी तरह अपने बच्चों को गलत मानते है। मैं फेसबुक में शरद कुमार जी की पीडा पढता रहता हूॅ। वे अपने बच्चो,पत्नी तथा अन्य कुछ रिश्तेदारों के व्यवहार से भी बहुत दुखी रहते है। दूसरी ओर मैं स्वयं को देखता हूॅ तो पाता हूॅ कि मैं दुनियां का सबसे अधिक सुखी व्यक्ति हूॅ। मेरे परिवार के लोग रिश्तेदार, मित्र और यहॉ तक कि स्टाफ के लोग भी कभी ऐसा काम नहीं करते जिससे

मुझे कभी कोई दुख हो। इन दोनों बातों से होने वाले सुख और दुख में सामने वाला व्यक्ति कम और व्यक्ति स्वयं अधिक दोषी है क्योंकि व्यक्ति सामने वाले की सोच परिस्थितियॉ और नीयत का ऑकलन किये बिना उससे कुछ उम्मीदे करने लगता है जो पूरी नहीं होती अथवा विपरीत होती हैं तब उसे दुख होता है। वास्तविकता यह है कि दुख होने का कारण व्यक्ति का स्वयं का गलत अनुमान है। यदि आप किसी बैठक में जा रहे है और आपने अनुमान किया है कि इस बैठक में 15 लोग आ सकते है। यदि 20 लोग आते है तो आप प्रसन्न और 10 आते है तो दुखी होंगे। कल्पना करिये कि आपने 25 का अनुमान किया है तब 20 आये तो आप दुखी और 10 आये तो नाराज हो जायेंगे। आपकी प्रसन्नता और नाराजगी का संबंध आने वालो की संख्या से नहीं है और आप प्रसन्न या दुखी होकर संख्या को घटा बढा भी नहीं सकते। स्पष्ट है कि आपका गलत ऑकलन ही आपके सुख और दुख का कारण बना। आप किसी यात्रा में अनुमान किये कि यह ट्रेन 2 घंटे लेट पहुॅचेगी और वह 1 घंटे ही लेट पहुची तो आप प्रसन्न हो गये और जब वह 3 घंटे लेट पहुंची तो आप दुखी हो गये। स्पष्ट है कि आपका अनुमान ही सुख दुख का कारण था ट्रेन नहीं।

अनेक लोग दूसरों से बहुत अपेक्षाए करते है और उन अपेक्षाओं के आधार पर परिणाम का ऑकलन कर लेते है। अपेक्षाए भी यथार्थ नहीं होती और परिणाम भी वैसे नहीं होते। अतीत का अनुभव लिये बिना यदि आप काल्पनिक अपेक्षाए करते है तो गलत आप है, सामने वाला नहीं। हमेशा दिमाग में सर्वश्रेष्ठ संभव का सिद्धांत बनाकर रखना चाहिये। जो लोग सर्वश्रेष्ठ का सिद्धांत मानकर चलते है वे अपने जीवन में अंत तक स्वयं भी दुखी रहते है तथा अपने अन्य सम्पर्को को भी निरंतर दुखी रखते है। जो कुछ हो रहा है और उपलब्ध है उसमें सर्वश्रेष्ठ क्या है उसी से संतुष्ट रहना चाहिये और उसी संतुष्टी में सुख का अनुभव करना चाहिये। भगवान बुद्ध के समान संसार दुखो का समुद्र है इस धारणा को मैं गलत मानता हूॅ क्योंकि बुद्ध के समय हो सकता है कि ऐसा हो किन्तु वर्तमान समय में तो मैं बिल्कुल ऐसा नहीं देखता।

मेरे विचार से सुख और दुख के प्रभाव से बचने के लिए संभावित परिणाम का अनुमान सही होना सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। कोई भी व्यक्ति खुश रहने के लिए जानबुझकर अपने अनुमान को घटा बढा नहीं सकता। अनुमान बौद्धिक ऑकलन से होता है और सुख–दुख भावनात्मक। भावना प्रधान लोग जल्दी सुख–दुख से प्रभावित हो जाते है क्योंकि उनका अनुमान ही गलत होता है। जबकि बुद्धि प्रधान लोग सुख और दुख से कम प्रभावित होते है क्योंकि उनका अनुमान यथार्थ के नजदीक होता है। भावना प्रधान लोगों के लिए सुख और दुख से बचने का एक और मार्ग है कि वे किसी भी अप्रत्याशित परिणाम के लिए अपना सुख और दुख ईश्वर पर छोड दे अर्थात जो भी हुआ वह स्वाभाविक था, ईश्वर की मर्जी थी और उसमें किसी का कोई दोष नहीं है। इस तरह ईश्वर को शामिल कर लेने से भी सुख और दुख में कुछ कमी की जा सकती है। मैं चाहता हूॅ कि हम सुख और दुख के मामले में अपने सोचने के तरीके में कुछ बदलाव करने का प्रयास करें।

मंथन कमांक 25

निजीकरण, राष्ट्रीयकरण, समाजीकरण

व्यक्ति और समाज एक दूसरे के पूरक होते है। दोनो मिलकर ही एक व्यवस्था बनाते है। व्यक्ति की उच्श्रृंखलता पर समाज नियंत्रण नहीं कर सकता क्योंकि समाज एक अमूर्त इकाई है इसलिए राज्य की आवश्यकता होती है। समाज और राज्य एक दूसरे के लिए सहयोग और नियंत्रण का कार्य करते रहते है। व्यक्ति की स्वतंत्रता की सुरक्षा समाज का कर्तव्य होता है और राज्य का दायित्व। व्यक्ति के मौलिक अधिकारों में सम्पत्ति का भी समावेश होता है। इसका अर्थ है कि व्यक्ति की सहमति के बिना राज्य उसकी सम्पत्ति में भी कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता।

पश्चिम की लोकतांत्रिक और पूंजीवादी व्यवस्था में व्यक्ति सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है तो साम्यवादी व्यवस्था में राज्य। भारत की प्राचीन व्यवस्था में समाज और व्यक्ति के अधिकारों का संतुलन बिल्कुल ठीक था जो भारत की गुलामी के काल में बिगड गया। मुस्लिम शासन काल में व्यक्ति कमजोर हुआ तो अंग्रेजो के शासनकाल में समाज कमजोर हुआ। स्वतंत्रता के बाद तो यह एक तरह का खिचडी सरीखा बन गया जिसमें पता ही नहीं है कि व्यक्ति समाज और राज्य की क्या स्थिति है। भारतीय व्यवस्था में साम्यवाद का कितना प्रभाव है और पूॅजीवाद

का कितना यह स्पष्ट नहीं है। सन् 91 के पहले तो भारत की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था पर साम्यवाद का विशेष प्रभाव था किन्तु उसके बाद धीरे–धीरे पूंजीवाद की घुसपैठ हुई और वर्तमान में दोनों की खिचडी बनी हुई है।

जिन भी देशों में राष्ट्र शब्द का उपयोग होता है उसका वास्तविक आशय सरकार से ही होता है चाहे राष्ट्र शब्द का उपयोग संघ परिवार के लोग करें या साम्यवादी, नीयत दोनों की एक ही होती है। इसका अर्थ हुआ कि सरकारीकरण को ही मीठी चाशनी में लपेट कर राष्ट्रीयकरण कर दिया जाता है, जबकि राष्ट्रीयकरण जैसा कुछ नहीं होता है।

यदि किसी देश में तानाशाही होती है तो राष्ट्रीयकरण से देश या राज्य तरक्की करता है,और समाज गुलाम हो जाता है किन्तु यदि किसी देश में लोकतंत्र है तो राष्ट्रीयकरण भ्रष्टाचार का केन्द्र बन जाता है। भारत ऐसे ही भ्रष्टाचार का केन्द्र बना है जहॉ की आर्थिक व्यवस्था में पूरी तरह सरकार का नियंत्रण है। यदि राष्ट्रीयकरण किसी मामले में नहीं भी है तो भी सरकार का नियंत्रण इतना अधिक है कि भ्रष्टाचार होना ही है। किसी भी प्रकार के भ्रष्टाचार से मुक्ति के लिए सम्पूर्ण निजीकरण ही एकमात्र समाधान है। निजीकरण से गरीब और अमीर के बीच की दूरी बढती है क्योंकि स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा में गरीब और श्रमजीवी पिछडेगा ही। किन्तु सरकारीकरण इस आर्थिक असमानता का समाधान न होकर विस्तार देने वाला होता है क्योंकि प्रतिस्पर्धा कार्यक्षमता को बढाती है तथा उत्पादन में भी वृद्धि करती है। राष्ट्रीयकरण से नुकसान ही नुकसान होता है। मेरा अनुमान है कि कोई भी सरकार किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता देना नहीं चाहती। वर्तमान सरकार दो वर्षो से पूंजीवाद की तरफ बढ रही है जिसका अर्थ हुआ कि धीरे–धीरे निजीकरण आ रहा है किन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि राजनेताओं की नीयत साफ है। भ्रष्टाचार और असफलताओं को देखते हुये ये लोग निजीकरण स्वीकार कर रहे है किन्तु यह भय बना हुआ है कि थोडी सी समस्या सुलझते ही फिर से इंस्पेक्टर राज और राष्ट्रीयकरण का नारा बुलंद कर सकते हैं। वैसे भी सैद्धांतिक रुप से संघ परिवार राष्ट्रीयकरण अर्थात सरकारीकरण का पक्षधर रहा है यद्यपि वर्तमान में वह निजीकरण का समर्थन कर रहा है। भारत की वर्तमान समस्याओं का तात्कालिक समाधान तो अधिकतम निजीकरण ही है। सरकार को चाहिये कि वह अपने सुरक्षा और न्याय की आवश्यकताओ के अनुरुप टैक्स लगाकर बाकी सभी आर्थिक मामलों में सम्पूर्ण स्वतंत्रता दे दे, पश्चिमी देशों से भी अधिक।

यद्यपि सरकारीकरण का समाधान निजीकरण है किन्तु निजीकरण आदर्श व्यवस्था नहीं है। आदर्श व्यवस्था तो समाजीकरण है जिसका अर्थ होता है कि समाज की प्रत्येक इकाई को अपनी आर्थिक नीतियों के संबंध में निर्णय लेने की पूरी स्वतंत्रता हो। परिवार की पारिवारिक मामलों में गांव को गॉव संबंधी मामलों में और उपर की इकाईयों को अपने–अपने अन्य मामलों में। एक स्कूल चलाना है। गांव के लोग बैठकर यह निर्णय कर सकते है कि स्कूल की पूरे गांव के द्वारा व्यवस्था होनी चाहिये अथवा किसी व्यक्ति को करने दिया जाये। मैं नहीं समझता कि इस स्कूल के मामले में सरकार का हस्तक्षेप क्यों हो। कोई परिवार अपने बालक को नहीं पढाना चाहता तो समाज उसे पढाने के लिए बाध्य कर सकता है किन्तु सरकार कौन होती है बीच में दखल देने वाली। सरकार ने तो ऐसा वातावरण बना दिया है कि जैसे सरकार ही समाज हो और उसे सारे अधिकार प्राप्त हो।

मेरा स्पष्ट मत है कि सबसे अच्छी व्यवस्था और आदर्श स्थिति तो समाजीकरण है और सबसे बुरी स्थिति राष्ट्रीयकरण है। बीच में निजीकरण है। वर्तमान में राष्ट्रीयकरण से छुटकारा के लिए अल्पकाल में निजीकरण को भले ही प्रोत्साहित किया जाये किन्तु दीर्घकालीन नीति तो समाजीकरण ही है। सभी समस्याओं का यही समाधान है।

भारत की राजनैतिक समीक्षा

पांच राज्यों के चुनावों के नतीजे आ गये है। कौन सी पार्टी जीती और कौन हारी ये मेरे ऑकलन का विषय नहीं है। मैं तो इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूॅ कि अल्पसंख्यक तुष्टीकरण के विरुद्ध भारत की जनता ने खुलकर अपना मत व्यक्त किया है।

70 वर्षो से यह माना जा रहा था कि भारत का राजनैतिक भाग्य अल्पसंख्यक ही लिखते है। भारत के आम हिन्दुओं को दूसरे दर्जे का नागरिक माना जा रहा था। पिछले 3 वर्षो से इस विचार को चुनौती मिली। आज सम्पन्न चुनावों ने इस टकराव में निर्णायक भूमिका अदा की। जिन लोगों ने भी अल्पसंख्यक तुष्टीकरण को

आधार बनाया, वे सब चारो खाने चित नजर आ रहे है। यहॉ तक कि उत्तर प्रदेश के चुनाव में बडी संख्या में मुसलमानों ने भी मुस्लिम कट्टरवाद के विरुद्ध यथार्थ दृष्टिकोण अपनाया। पंजाब में अरविन्द केजरीवाल जिस सिख साम्प्रदायिकता के भरोसे सरकार बनाने का सपना देख रहे थे वह सपना भी टूट गया। मायावती ने भी बहुत हाथ पैर मारे किन्तु कुछ हाथ नहीं लगा।

मैं पिछले 3 वर्षो से लगातार अनुभव कर रहा हूॅ कि नरेन्द्र मोदी का शासनकाल लगातार उस दिशा में जा रहा है जिसे ये तुष्टीकरण समर्थक कभी चुनौती नहीं दे सकते। विचार करिये कि मायावती में ऐसा कौन सा गुण है जिसके कारण उसे एक भी वोट दिया जाये। वैसे तो इस कसौटी पर लालू प्रसाद भी खरे नहीं उतरते। यदि हम पंजाब की बात करे तो वहॉ भगवत मान सरीखे चेहरे मुख्यमंत्री के दावेदार दिख रहे थे । पता नहीं उनमें कौन सा गुण था।

मैं फिर स्पष्ट कर दूॅ कि भारत की राजनीति बिल्कुल ठीक दिशा में जा रही है। नरेन्द्र मोदी सत्ता पक्ष के प्रबल दावेदार है तो नीतिश कुमार, अखिलेश यादव और आंशिक रुप से राहुल गॉधी की जोडी विपक्ष के दावेदार है और बाकी सारे लोगों का साफ होना स्पष्ट दिख रहा है, भले ही कुछ समय लगे। नतीजे मेरी अपेक्षानुसार आये है और मैं भविष्य के प्रति पूरी तरह आश्वस्त हूॅ।

मंथन कमांक 26

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ हिन्दुत्व की समस्या या समाधान

दवा और टॉनिक के अलग–अलग परिणाम भी होते है तथा उपयोग भी। दवा किसी बीमारी की स्थिति में अल्पकाल के लिए उपयोग की जाती है जबकि टॉनिक स्वास्थवर्धक होता है और लम्बे समय तक प्रयोग किया जा सकता है। टॉनिक के दुष्परिणाम नहीं होते जबकि दवा के दुष्परिणाम भी संभव हैं। दवा किसी अनुभवी डॉक्टर की सलाह से ही ली जाती है जबकि टॉनिक कभी भी उपयोग किया जा सकता है। यदि दवा निश्चित बीमारी पर नियंत्रण के बाद भी उपयोग की जाये तो गंभीर दुष्परिणाम भी हो सकते हैं। बताया जाता है कि सीमित मात्रा में शराब दवा का काम भी करती है किन्तु आदत पडने के बाद बहुत गंभीर नुकसान पहुंचाती है । इसलिए टॉनिक को दवा और दवा को टॉनिक के समान उपयोग करना हानिकारक होता है।

भारतीय संस्कृति विचारप्रधान, इस्लामिक संस्कृति संगठन प्रधान, पाश्चात्य संस्कृति धन प्रधान और साम्यवादी संस्कृति उच्श्रृंखलता प्रधान मानी जाती है। संगठन में शक्ति होती है और धन में आकर्षण होता है। इसलिए भारतीय संस्कृति लम्बे समय तक इस्लामिक संस्कृति और पाश्चात्य विचारधारा की गुलाम रही। स्वतंत्रता के बाद जब स्वतंत्र भी हुई तो साम्यवादी संस्कृति ने उसको जकडना शुरु कर दिया। ऐसे संकटकाल में संघ परिवार ने अपनी हिन्दुत्व की मूल विचारधारा से हटकर इन तीनों संस्कृतियों का उनके ही तरीकों से मुकाबला किया। उनमें भी इस्लामिक संस्कृति ज्यादा संगठित थी और संघ परिवार ने उसे ही अपना प्रथम शत्रु घोषित किया। स्पष्ट है कि संघ ने इस्लामिक विस्तारवाद का भरपूर विरोध किया जो आज भी जारी है। संघ ने हिन्दुओं की घटती संख्या की निरंतर चिंता की। सांस्कृतिक आधार पर भी संघ परम्परागत मान्यताओं के साथ लगातार दृढ़ रहा जबकि पाश्चात्य जगत और साम्यवाद परम्पराओं को किसी भी परिस्थिति में तोडकर उसे आधुनिक वातावरण में बदलने का प्रयास करते रहे। परिवार व्यवस्था में भी संघ परम्पराओं के साथ मजबूती से डटा रहा जबकि स्वतंत्रता के बाद अन्य सबने मिलकर परिवारों को छिन्न भिन्न करने के लिए आधुनिकता का कुचक्र रचा। राष्ट्रीय सुरक्षा के मुद्दे पर भी संघ पूरी ताकत से सक्रिय रहा जबकि इस्लाम और साम्यवाद पूरी तरह राष्ट्रीय सुरक्षा को कमजोर करने का प्रयास करते रहे। नैतिकता और चरित्र के मामले में भी संघ की अपनी एक अलग पहचान बनी हुई है। आज भी हम देख रहे है कि लव जेहाद, धर्म परिवर्तन या जनसंख्या वृद्धि को आधार बनाकर मुस्लिम साम्यवादी गठजोड़ का मुकाबला करने में संघ निरंतर सक्रिय है। जे एन यू संस्कृति से संघ निरंतर टकरा रहा है। यहॉ तक कि कई प्रदेशों में संघ के कार्यकर्ता प्रताडित भी किये जाते है किन्तु संघ अपने हिन्दुओं की सुरक्षा के कार्य में

कोई कमजोरी नहीं दिखाता। अपने विस्तार के लिए संघ प्रेम, सेवा, सद्भाव का भी सहारा लेता रहा है। यदि कोई अकास्मिक दुर्घटना हो जाती है तो संघ बिना भेदभाव के भी सेवा करने को आगे आ जाता है। इस तरह कहा जा सकता है कि हिन्दुत्व को गंभीर रुप से प्रभावित करने वाली बीमारियों से टकराने में संघ अकेला सबसे आगे रहा है।

पिछले कुछ समय से ऐसा दिख रहा है कि संघ हिन्दु समाज में दवा को टॉनिक के रुप में उपयोग करने की आदत डाल रहा है। मोदी के पूर्व भारत में हिन्दुओं को दूसरे दर्जे का नागरिक बनाकर रखा गया। स्पष्ट है कि भारत में यदि मुसलमानों की संख्या एक तिहाई भी हो जाती तो भारत में हिन्दुओं की स्थिति पाकिस्तान या कश्मीर सरीखे कर दी जाती। किन्तु हिन्दुत्व गुण प्रधान संस्कृति है, संगठन प्रधान नहीं। मजबूत होने की शुरुवात होते ही मोदी से हटकर हिन्दू राष्ट्र का नारा देना हिन्दुत्व के विरुद्ध है। हिन्दुत्व की सुरक्षा के लिए तो विशेष अभियान चलाया जा सकता है किन्तु इस्लामिक तरीके से अपने विस्तार के विषय में सोचना हिन्दुत्व के विरुद्ध है। परिवार व्यवस्था को परम्परागत या आधुनिक की अपेक्षा लोकतांत्रिक दिशा में ले जाना चाहिए। राष्ट्र भावना को भी कभी राष्ट्रवाद की दिशा में नहीं बढना चाहिये क्योकि हिन्दू समाज को राष्ट्र या धर्म से उपर मानता है जो अन्य लोग नहीं मानते। अन्य धर्मावलम्बियों को अपने साथ जोडने की घर वापसी भी उचित नहीं है। इससे अच्छा तो यह होता कि धर्म परिवर्तन कराने पर कानून के द्वारा रोक लगाने की मांग की जाती। मुस्लिम आक्रामकता को कमजोर करने के नाम पर मंदिर, गाय, गंगा जैसे भावनात्मक मुद्दो को किनारे करके समान नागरिक संहिता को अधिक महत्व दिया जाता। संघ भी समान नागरिक संहिता पर जोर देता है और चाहता है समान आचार संहिता जो बहुत घातक है। भारत सवा सौ करोड व्यक्तियों का देश हो और सबको समान अधिकार हो यह समान नागरिक संहिता होती है लेकिन संघ इसके विपरीत चाहता है। संघ धर्म और विज्ञान के बीच भी दूरी बढाना चाहता है,जो ठीक नहीं। धर्म और विज्ञान के बीच समन्वय होना चाहिये। संघ वामपंथ के मुकाबले दक्षिणपंथ की दिशा में चलना चाहता है जबकि उसे अब उत्तरपंथ की दिशा में चलना चाहिए अर्थात् संघ को परम्परा और आधुनिक के बीच यथार्थ का सहारा लेना चाहिये। संघ को भावनाओं की अपेक्षा विचारों को अधिक महत्व देना चाहिए। संघ के प्रारंभ के बाद के सौ वर्षो में भारत वैचारिक धरातल पर निरंतर पिछड रहा है। विवेकानंद के बाद भारत में कोई गंभीर विचारक आगे नहीं आ सका और इस संबंध में संघ ने कभी कुछ नहीं सोचा। संख्या विस्तार की अपेक्षा गुण प्रधानता अधिक महत्वपूर्ण होती है। साम्यवाद ने गुण प्रधानता को छोड दिया जिसके कारण वह समाप्ति की कगार पर है। इस्लाम ने भी संख्या विस्तार और संगठन को एकमात्र लक्ष्य बना लिया। स्पष्ट दिख रहा है कि यदि उसने बदलाव नहीं किया तो उसकी दुर्गति निश्चित है। उचित होगा कि हिन्दुत्व उस प्रकार की भूल न करें। लेकिन संघ इस संबंध में सतर्क नहीं है। हम अब भी यदि सुरक्षात्मक मार्ग पर चलते रहे तो विश्व व्यवस्था में हमारी लाखों वर्षो की पहचान खतरे में पड जायेगी।

हिन्दुत्व की सुरक्षा के लिए हमने दवा के रुप में संघ का सहारा लिया, इसके लिए संघ बधाई का पात्र है। वर्तमान समय में भी भारत में इस्लाम की ओर से ऐसा कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिला है कि उन्होंने हार मान ली हो। मोदी जी के नेतृत्व में उन्हें सुधार या समापन में से एक को चुनना होगा और भारत का मुसलमान गंभीरतापूर्वक इस विषय पर विचार भी कर रहा है। किन्तु यह उचित नहीं होगा कि हम भविष्य में भी दवा को टॉनिक के रुप में उपयोग करने की आदत डाल ले। संघ परिस्थिति अनुसार दवा है और स्वस्थ होने के बाद भी उसका उपयोग स्वास्थ के लिए नुकसान देह है। हिन्दुओं को इतनी सतर्कता अवश्य रखनी चाहिए।

मेरी अपने मित्रों को सलाह है कि वे हिन्दुत्व की सुरक्षा के प्रयत्न में संघ का निरंतर समर्थन सहयोग करें। किन्तु यदि संघ इससे आगे बढकर अन्य संस्कृतियों से बदला लेना चाहता है तो हम ऐसे प्रयत्नों का भरपूर विरोध करें। अब तक नरेन्द्र मोदी की दिशा ठीक दिख रही है और नरेन्द्र मोदी हिन्दुत्व विरोधी अथवा हिन्दुत्व के नाम पर अपना एजेंडा थोपने वाले संघ परिवार के बीच यथार्थवाद की लाईन पर चलते दिख रहे है और किसी भी पक्ष के दबाव में नहीं आ रहे है। हमारा कर्तव्य है कि हम भावनाओं से उपर उठकर हर मामले में हर संगठन के कार्यो की समीक्षा करके ही अपनी सहभागिता की आदत डालें।

भारत में नक्सलवाद

मैं गढ़वा रोड़ में स्टेशन पर टिकट के लिये लाइन में खड़ा था। मेरी लाइन आगे नहीं बढ़ रही थी और कुछ दबंग लोग आगे जाकर टिकट ले लेते थे, तो कुछ पैसे देकर भी ले आते थे। मेरे लड़के ने भी मेरी सहमति से धक्का देकर आगे बढने की कोशिश की और टिकट ले आया। धक्का देने मे एक बुढ़िया गिर गई, उसने उठाया भी नहीं और मेरी आपत्ति पर उसने कहा कि लोकतंत्र में तो कमजोर ही धक्का खाता है और खड़ा रह जाता है। जबकि धक्का देने वाला हमेशा आगे बढता रहता है। मैं वर्षो तक विचार करता रहा, सोचता रहा कि धक्का खाकर खड़े रह जाना उचित है या धक्का देकर आगे जाना। वर्षो बाद मैंने अपने झारखंड के एक मित्र से दुविधा बताई तो उसने कहा कि दोनो ही मार्ग गलत है। मैं तो धक्का देने वाले को पटक दूंगा और जरूरत पडी तो गोली भी मार दूंगा। मेरा वही मित्र बाद में नक्सलवादियों का नेता बना। उसने हमारे शहर के आस पास कुछ लोगो को गोलियां भी मारी और खुद भी मारा गया। आज भी हमारे पूरे क्षेत्र में वही तीनों स्थितियां विद्यमान है जैसी पहले थी। यदि ठीक से सर्वे किया जाये तो देश की सम्पूर्ण आबादी में तीनो ही प्रकार के लोग मिलते है। तीनों के अपने–अपने तर्क हैं और तर्क भी आकाट्य हैं। उन्हीं तीनों में कुछ लोगों को शरीफ कहते है तो कुछ लोगों को चालाक और कुछ को उग्रवादी।

आम तौर पर ऐसे उग्रवादी संगठित हो जाया करते है। भारत मे ऐसे तीन संगठन हैं जो उग्रवादी विचारों के आधार पर कार्य करते रहते हैं। उग्रवादियों में से ही कुछ लेाग अतिवादी हो जाते है जो आतंकवादी कहे जाते है। संघ विचारो से ओत प्रोत आतंकवादी अभिनव भारत के नाम से आगे बढे तो इस्लाम की विचार धारा से प्रेरित आतंकवादी प्रत्यक्ष दुनियां भर मे दिख रहे है और साम्यवादी विचार धारा से प्रेरित आतंकवादियों को नक्सलवादी कहा जाता है। सभी उग्रवादी संगठन प्रारंभ में आतंकवादियों का अप्रत्यक्ष समर्थन करते है। दूसरी ओर जब आतंकवादी मजबूत होते है तो सबसे पहले उसी संगठन को निशाना बनाते है जिसके सहारे वे आगे बढे है। नक्सलवादियों ने भी बंगाल में साम्यवादियों को निशाना बनाने में कोई कसर नहीं छोडी थी। यहां तक कि उन्होंने ममता बनर्जी तक का साथ दिया था। मुझे देश भर के नक्सलवादियों से तो प्रत्यक्ष जानकारी नहीं है किन्तु मेरा अनुभव बताता है कि छत्तीसगढ में नक्सलवाद के प्रोत्साहन में दिग्विजय सिंह जी का अप्रत्यक्ष प्रयास रहा है। बाद में जब गृहमंत्री चितम्बरम ने ईमानदारी से नक्सलवाद को समाप्त करने की योजना बनाई तब भी दिग्विजय सिंह जी ने ही राहुल गांधी की शराफत का लाभ उठाकर नक्सलवादियों को बचाने की भूमिका अदा की थी। गांधी वादी भी ऐसे ही सीधे साधे होते है और वे भी ऐसे नक्सलवादियो को बचाने में हमेशा ढाल का काम करते है। उग्रवाद और आतंकवाद से निपटने के तरीके अलग–अलग होते है। उग्रवाद से कानून निपट सकता है किन्तु आतंकवाद से कानून की जगह राज्य को निपटना पड़ता है। नक्सलवाद की सुरक्षा में अनेक लोग या संगठन कानून का सहारा लेकर राज्य का विरोध करते देखे जाते है। वामपंथी और जे एन यू संस्कृति से प्रभावित न्यायपालिका के लोग भी यही भूल करते रहे है। अनेक बडे–बडे लेखक और साहित्यकार भी ऐसा करते देखे गये है। ऐसे लोग नक्सलवाद के लिये एक सुरक्षा कवच का काम करते है और साथ में यह भी कहकर अपनी पीठ थपथपाते है कि उन्होंने कानून और मानवाधिकार की रक्षा की है जबकि नक्सलवादियों द्वारा किये जा रहे अपराधो या अमानवीय कार्यो की रोकथाम के समय ऐसे न्यायाधीशों या अन्य लोगो की कोई भूमिका नहीं होती।

नक्सलवादियों से मेरी चर्चा रही है। वे सभी समस्याओं का कारण राजनैतिक, सामाजिक ,आर्थिक व्यवस्था को तथा समाधान अपनी सरकार को बताते रहे है। उनके पास वैकल्पिक व्यवस्था का कोई स्वरुप नहीं था। उनके पास इस बात का कोई उत्तर नहीं था कि यदि उनकी सरकार गलत करेगी तो उसे हटाने का समाज के पास क्या तरीका होगा। हमारी संविधान मंथन सभा मे भी ऐसे कुछ लोग आते रहे है किन्तु उनके पास कोई ऐसा प्रारूप नहीं था कि वे कैसा संविधान प्रस्तुत करेंगे । उनका ये ही उत्तर था कि जब समय आयेगा तब देखा जायेगा। जब सरगुजा जिले में नक्सलवाद आया और हमलोगों ने उन्हें सलाह दी कि वे गोली बंदूक छोडकर ग्राम सभाओ को स्वतंत्रता पूर्वक अपना कार्य करने दे तो उन्होंने अस्वीकार कर दिया। इस तरह यह स्पष्ट हो गया कि नक्सलवाद किसी भी रूप में व्यवस्था परिवर्तन नहीं है। बल्कि पूरी तरह सत्ता संघर्ष है। हमलोगो ने उनसे दूरी बना ली और सरकार का साथ दिया। परिणाम हुआ कि नक्सलवाद हमारे जिले से शून्य हो गया। पूरे भारत में हमारा जिला अकेला ऐसा है जहां नक्सलवाद बहुत तेजी से आया, छाया भी और उसी तेजी से हार थक कर समाप्त

भी हो गया। दूसरी ओर हम छत्तीसगढ के उस दक्षिणी छोर को भी देख रहे है जहां नक्सलवादियों ने एक छोटे भूभाग पर अपनी स्वतंत्र सरकार बना रखी है और भारत सरकार निरंतर उसे मुक्त कराने का प्रयास कर रही है। देश भर में यह प्रचारित किया जाता है कि नक्सलवादियों को स्थानीय लोगो का जन समर्थन प्राप्त है। यह बात पूरी तरह गलत है। हमारे जिले में भी जब नक्सलवादी उस स्थिति में थे तो उनसे भयभीत लोग उनका समर्थन करते थे और आज जब सरकार का शासन है तो उनकी प्रशंसा करने वाला एक भी व्यक्ति पुरे जिले में नहीं मिलेगा। नक्सलवादियों के हितैषी इस तरह का दुष्प्रचार करते ही रहते है।

नक्सलवाद साम्यवाद का अतिवादी स्वरुप है। इसका अर्थ है कि साम्यवाद के सारे दुर्गुण नक्सलवाद में भी मौजूद रहते है। गुण तो कोई न साम्यवाद में दिखता है न ही नक्सलवाद में । वर्ग विद्वेश को आधार बनाकर असंतोष का विस्तार इन सबका एक मात्र मार्ग होता है। धीरे धीरे ये लोग अपने व्यक्तिगत जीवन में भी असंतुष्ट हो जाते है। जो लोग भय या स्वार्थ के कारण नक्सलवादी नहीं होते। ऐसे लोग अपने बाद के जीवन में असंतोष को महसूस करते है। नक्सलवाद के जन्म दाता कानू सान्याल वृद्धावस्था में आत्महत्या करके मरे । क्योंकि वे नक्सलवाद के सत्ता संघर्ष के मार्ग के विरूद्ध थे । दो चार दिन पहले ही प्रसिद्ध कवि गदर के भी हृदय परिवर्तन की खबरे आ रही है।

यदि हम नक्सलवाद के भविष्य की बात करें तो पिछली सरकारो के समय पूरे प्रशासन में बडी संख्या में लोग नक्सलवादियों की ढ़ाल के रूप में काम करते थे। मानवाधिकार संगठन या अन्य कई प्रकार के लोग भिन्न–भिन्न बोर्ड लगाकर भिन्न–भिन्न तरीको से नक्सलवाद का समर्थन करते दिखते रहते थे। अब वातावरण बदल गया है। जे एन यू उस विचार धारा का प्रमुख केन्द्र था। वह स्वयं अपने अस्तित्व की लडाई लड रहा है। साम्यवाद भी देश भर में समाप्ति की ओर है । न्यायपालिका की भी सोच में बदलाव आ रहा है। साहित्य और पत्रकारिता के लोग भी पुरस्कार वापसी के असफल प्रयास के बाद चुप हैं। अग्निवेष जी भी स्थितियां भाप रहे है। दिग्विजय सिंह जी का प्रभाव अपने आप घट रहा है। ब्रहमदेव शर्मा तो चले गये और सर्वोदय भी अब दो गुटों में बंटकर कमजोर हो गया है। राज्य सभा में धीरे–धीरे वर्तमान सरकार मजबूत होती जा रही है और ऐसा लगता है कि नक्सलवाद का सम्पूर्ण समापन बहुत दूर नहीं है। अर्थात एक दो वर्षो की ही बात है। यदि कल्लूरी बस्तर में रह गये होते तो यह काम बहुत जल्दी निपट गया होता किन्तु उनके जाने के बाद भी कोई बहुत ज्यादा अंतर नहीं आएगा। क्योकि अब सरकार में आतंकवाद और नक्सलवाद का अप्रत्यक्ष समर्थन करने वाले कोई नहीं है। एक बार बस्तर मुक्त होते ही पूरे देश में नक्सलवाद की कमर टूट जायेगी । और इस तरह मैं आश्वस्त हूँ कि नक्सलवाद देश के लोगो के लिये कोई गंभीर चिंता का विषय नहीं है। देश की वर्तमान सरकार उसे समाप्त कर ही लेगी। नक्सलवाद का जीवित रहना कश्मीर समस्या के अपेक्षा भी अधिक बडा कलंक था। किन्तु अब उस कलंक से हमें मुक्ति मिल जायेगी। ऐसा निश्चित दिखता है।

उत्तरार्ध

अधिवेशन की संक्षिप्त रिर्पोट द्वारा श्री संजय तिवारी

अक्टूबर पंद्रह के नोएडा सम्मेलन मे व्यवस्था परिवर्तन अभियान को दो भागो मे बांटा गया था। एक सम्पूर्ण व्यवस्था परिवर्तन अभियान जिसका सम्पूर्ण संचालन मुनि जी को दिया गया तथा दूसरा चार सूत्रीय जन जागरण अभियान जिसका संचालन व्यवस्थापक को दिया गया। दोनो संस्थाओं का संयुक्त अधिवेशन नोएडा धर्मशाला में सत्रह से उन्नीस मार्च 2017 के बीच सम्पन्न हुआ। अधिवेशन में देश के बीस प्रदेशो के एक सौ दस प्रतिनिधियों तथा लगभग दो सौ विशेष आमंत्रित साथियों ने भाग लिया।

प्रारंभ संपूर्ण व्यवस्था परिवर्तन अभियान से हुआ। परिपाटी के अनुसार आधे घंटे के वैदिक यज्ञ से शुरूआत हुई। वैदिक मंत्रोच्चार तथा यज्ञ सुगन्ध से अधिवेशन स्थल का वातावरण यज्ञ मय हो गया। बजरंग मुनि जी ने प्रारंभ मे अपने विचार रखे। बजरंग मुनि ने कहा कि भारत विचारों के निर्यातक से अब विचारों का आयातक हो गया है इसलिए हमारे यहां मौलिक विचारों का घोर अकाल हो गया है। आज विदेश से आये विचार भारत में लोकतंत्र और समाज को परिभाषा दे रहे हैं जिसके कारण समस्याएं दिन प्रतिदिन विकराल होती जा रही हैं और कोई समाधान सामने नहीं आ रहा है। हमें इस कलंक को मिटाना है और भारत को विचारों का निर्यातक

बनाना है। श्री मुनि ने कहा कि, आज राज्यसत्ता समाज को गुलाम बनाकर रखना चाहती है इसलिए वह मुख्य रूप से दो षणयंत्र कर रही है। पहला, समस्याओं का वैचारिक आधार पर निष्कर्ष निकालने की बजाय भावनात्मक स्तर पर निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया जा रहा है, इसी तरह विचार मंथन की जगह विचार प्रचार को ज्यादा महत्व दिया जा रहा है। आज हमारे समाज में विचार प्रचार तो खूब होता है लेकिन विचार मंथन बिल्कुल बंद हो गया है। हमारा प्रयास ये है कि हम समाज में सोचने की शक्ति को जागृत करें।

मुनि जी ने बताया कि ग्राम संसद अभियान जन जागरण द्वारा ग्राम सभाओं को ग्राम संसद का स्वरूप दिलाकर उन्हे गांव का आंतरिक संविधान बनाने तथा राष्ट्रीय संविधान संशोधन मे भूमिका दिला देगा किन्तु उसके बाद उस अधिकार का अधिकतम और सार्थक सदुपयोग हो इसके लिये अलग से जनमत परिष्कार करते रहना होगा, तभी राजनैतिक के साथ साथ सामाजिक आर्थिक, न्यायिक, धार्मिक, पारिवारिक सहित सम्पूर्ण व्यवस्था मे बदलाव के लाभ दिखेंगे। मुनि जी ने स्पष्ट किया कि हमारा उद्देश्य विश्व व्यवस्था मे बदलाव का है। जिसकी शुरूआत भारत से हो रही है ।

मुनि जी ने पिछले वर्ष की सक्रियता तथा अगले वर्ष की योजना रखी। एक अक्टूबर सोलह से मंथन कार्यक्रम प्रारंभ करके जनमत परिष्कार शुरू किया गया है जो निरंतर जारी है। प्रत्येक शनिवार को एक विषय पर विस्तृत विचार फेसबुक, वाट्सअप, काशइंडिया पर जाता है तथा सात दिन तक उस पर प्रश्नोत्तर चलता रहता है। शनिवार को फिर नया विषय आ जाता है। यह सब विचार ज्ञान तत्व के माध्यम से उन साथियों तक भी जाता है जो फेसबुक वाटसअप से नही जुडे है। वर्ष सत्रह मे योजना है कि जून माह से प्रतिमाह दिल्ली मे दो या तीन दिनो की एक प्रत्यक्ष चर्चा हो जो मंथन मे चर्चा मे आये विषयो पर केन्द्रित हो। यह चर्चा दिल्ली मे होगी । बाहर के साथियो के निवास और भोजन की व्यवस्था का प्रयास किया जायेगा। इसके अतिरिक्त देश भर के प्रत्येक जिले से औसत पांच विद्वानों का चयन किया जायेगा। ऐसे करीब तीन हजार विद्वानो की सहभागिता से दो हजार उन्नीस के मध्य मे एक माह की एक संविधान मंथन सभा रखी जायेगी, जो भारत के वर्तमान संविधान के पूरी समीक्षा करके संशोधन प्रस्ताव तैयार करेगी। प्रतिमाह होने वाले कार्यक्रम की व्यवस्था प्रवीण शर्मा जी तथा रामवीर जी करेंगे। संविधान मंथन सभा की व्यवस्था आचार्य पंकज जी तथा प्रमोद केशरी जी करेंगे।

मुनि जी के उदबोधन के बाद यह सत्र समाप्त हुआ।

थोडी देर बाद ही ग्राम संसद अभियान का सत्र प्रारंभ हुआ। संचालन ओम प्रकाश जी दुबे ने किया। ग्लोब के माल्यार्पण से सत्र शुरू हुआ। अपने तीन स्वर्गीय संरक्षक श्री ठाकुर दास जी बंग, श्री राज सिंह जी आर्य तथा श्री आर्य भूषण भारद्वाज की संक्षिप्त चर्चा के साथ उनके मंचस्थ चित्र पर माल्यार्पण किया गया। साथ ही अपने पांच संरक्षक 1. विजय कौशल जी महाराज 2. रामकृष्ण जी पौराणिक 3. प्रमोद कुमार जी वात्सल्य 4. डा0 एम एच पाटिल तथा 5. हीरालाल श्री माली जी का भी सम्मान किया गया। विजय कौशल जी उस समय नही थे जो दूसरे दिन आये। उदघाटन भाषण आचार्य पंकज जी ने दिया।

आचार्य पंकज ने कहा कि, बजरंग मुनि, जय प्रकाश नारायण द्वारा अधूरे छोड़े गये काम को पूरा कर रहे हैं। उन्होंने लोक जागरण के लिए जिस तरह से प्रयास किया था उसी तरह से बजरंग मुनि लोक जागरण की दिशा में काम कर रहे हैं। इस दिशा में दूसरी बार नोएडा में यह जुटान किया गया है। उन्होंने कहा कि बजरंग मुनि एक ऐसे विचारक हैं जो खुद थकते नहीं है और किसी को थकने भी नहीं देते हैं। ग्राम संसद अभियान के बारे में बताते हुए उन्होंने कहा कि यह अभियान कोई सामान्य अभियान नहीं है। यह समस्याओं के चट्टान से टकराने का अभियान है। आचार्य पंकज ने कहा कि संविधान का शासन होता है लोकतंत्र होता है लेकिन अगर शासन का संविधान हो जाए तो तानाशाही आ जाती है। आज देश में संविधान का शासन होने की बजाय शासन का संविधान कायम हो गया है। उन्होंने उदाहरण देते हुए कहा कि 2005 से सरकारी नौकरी ज्वाइन करने वालों को पेंशन का प्रावधान खत्म कर दिया गया है लेकिन आज भी नेताओं ने अपने लिए यह प्रावधान बना रखा है कि अगर कोई एक दिन के लिए भी सांसद चुन लिया जाता है तो उसे जीवनभर के लिए पेंशन मिलना निश्चित हो जाता है।

उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता भारत में मोंटेनेग्रो की हाई कमिश्नर जैनिश दरबारी ने किया। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कहा कि भारत गांवों का ही देश है और गांव सशक्त होंगे तभी भारत सशक्त होगा। दरवारी जी ने अपने

भाषण मे इस अभियान की सफलता की कामना की । उन्होने अपने जीवन की कई घटनाओ का उल्लेख करते हुए प्रतिभागियों का उत्साह भी बढाया और मार्गदर्शन भी किया।
उद्घाटन के बाद ग्राम संसद अभियान के लिए दिन भर चर्चा और बहस होती रही। पूरे देश को सौ लोक प्रदेशों में बांटकर उसके हिसाब से संगठन मंत्रियों के कार्य का बंटवारा और रुपरेखा भी तय की गयी।

दूसरे दिन अधिवेशन में ग्राम संसद अभियान के संरक्षक विजय कौशल महाराज उपस्थित रहे। दूसरे दिन के पहले सत्र में बोलते हुए बजरंग मुनि ने यह स्पष्ट किया कि लोक संसद अभियान को ही ग्राम संसद अभियान में परिवर्तित किया गया है। अब जो ग्राम संसद अभियान की रुपरेखा तय की गयी है वह लोक संसद और ग्राम सभा का मिला जुला स्वरुप है। उन्होंने कहा कि विजय कौशल जी ने ही सुझाव दिया था कि आंदोलन को फोकस किया जाए जिसके लिए जरूरी है कि किसी एक मुद्दे पर ही आगे बढ़ा जाए। उनके इस सुझाव पर विचार विमर्श करने के बाद ही ग्राम संसद अभियान का स्वरूप सामने आ पाया है जिसके लिए हम विजय कौशल जी के आभारी हैं। ग्राम संसद अभियान के बारे में बोलते हुए विजय कौशल महाराज ने कहा कि ग्राम संसद के पीछे मुख्य मकसद यह है कि गांव की ग्राम संसद और शहर की वार्ड संसद हो। वह अपने आंतरिक निर्णय खुद लेगी। उन्होंने कहा कि विधायक निधि और सांसद निधि को भी समाप्त कर दिया जाए और यह पैसा ग्राम संसद के माध्यम से ही खर्च किया जाए। उन्होंने कहा कि ग्राम संसद को यह अधिकार मिलना चाहिए कि वह जनप्रतिनिधियों के वेतन भत्ते के बारे में तय करे।

प्रस्ताव पर चर्चा प्रारंभ करते हुए रामवीर जी ने ग्राम संसद की आवश्यकता और स्वरूप की चर्चा की। उन्होने सुझाव दिया कि ग्राम संसद अपना आंतरिक संविधान इस प्रकार बनावे कि उनमे भारत की परिवार व्यवस्था की भी महत्वपूर्ण भूमिका हो। उन्होने कहा कि गांवो को अपना आंतरिक संविधान बनाने और तदनुसार व्यवस्था करने की स्वतंत्रता सारी समस्याओ का समाधान कर देगी।

अधिवेशन में विशेष रुप से निमंत्रित चंद्रशेखर प्राण ने कहा कि महात्मा गांधी ने कहा था, देश तो आजाद हो गया लेकिन देश के सात लाख गांव आज भी गुलाम हैं। जब तक भारत के गांवों को नैतिक और आर्थिक आजादी नहीं मिलती तब तक आजादी अधूरी है। श्री प्राण ने कहा कि दुर्भाग्य से आजादी के सत्तर सालों बाद भी गांवों को आर्थिक और नीतिगत आजादी नहीं मिल पायी है। गांवों को विचार, निर्णय और क्रिया करने की आजादी जिस दिन मिल जाएगी, भारत के गांवों को आजाद मान लिया जायेगा। उन्होंने कहा कि इस वक्त जो मोदी सरकार केन्द्र में सत्ता में है इस सरकार से हमें उम्मीद करनी चाहिए कि क्योंकि 2013 में ही वो कह चुके हैं कि गांव सभा भी संसद की तरह ही है। श्री प्राण ने कहा कि आज जनता की भूमिका सिर्फ जनप्रतिनिधि चुनने तक रह गयी है जबकि नीति निर्णय और कार्यान्वयन में उसकी कोई भूमिका नहीं रह गयी है। अधिवेशन में विशेष तौर पर निमंत्रित भारत कृषक समाज के राष्ट्रीय अध्यक्ष कृष्णवीर चौधरी ने कहा कि गांव के संसाधन पर गांव के लोगों का ही हक और निर्णय करने का अधिकार होना चाहिए तभी हमारे गांव आत्म निर्भर हो सकेंगे।

दुसरे सत्र मे श्री ओम प्रकाश दुबे ने ग्राम संसदो द्वारा राष्ट्रीय संविधान पर नियंत्रण की भूमिका पर प्रकाश डाला। इस सत्र का संचालन श्री ईश्वर दयाल जी ने किया। देश भर से आये प्रतिनिधियों ने प्रस्ताव पर व्यापक विचार विमर्श किया। कुछ लोगो ने कुछ सुझाव दिये तो कुछ ने एक दो संशोधन भी रखे। केरल तथा आन्ध्र तेलंगाना से आये साथियों ने वहां चल रहे ग्राम सभा के प्रयोगों की जानकारी दी। महाराष्ट्र के साथियों ने अपने क्षेत्र के कई सौ गांवो मे ग्रम सभाओ के माध्यम से आये व्यापक परिवर्तन को एक सफल प्रयोग के रूप मे बताया। आसाम के साथियो ने भी अपने विचार रखे।

तीसरे सत्र मे अलग अलग प्रदेशों के लोगो ने अलग अलग संगठन मंत्रियो के साथ बैठकर भविष्य के कार्यक्रम तय किये। रात के कार्यक्रम मे आसाम के साथियों ने कुछ लोक गीत व बिहू नृत्य प्रस्तुत किये।

तीसरे दिन पहले सत्र मे सभी प्रतिनिधियों तथा आमंत्रितो ने अपना संक्षिप्त परिचय दिया। परिचय के बाद प्रस्ताव पर चर्चा हुई । प्रस्ताव मे एक संशोधन के साथ प्रस्ताव सर्व सम्मति से पारित हुआ।

जो इस प्रकार है। –

1. नाम–ग्राम संसद

2. प्रस्ताव–क–देश की स्थानीय इकाइयों (ग्राम+वार्ड) को ग्राम संसद का नाम और स्वरूप दिया जाये।

ख–ग्राम संसदो द्वारा निर्दलीय आधार पर निर्वाचित पांच सौ तैतालीस सदस्यो की संविधान सभा राइट टू रिकॉल, जीवन भत्ता, श्रम, न्याय, लोकपाल नियुक्ति, सांसद वेतन भत्ता, समान नागरिक संहिता, संविधान संशोधन प्रक्रिया सहित सभी विषयों पर विचार करके संविधान संशोधन प्रस्ताव तैयार करे जिस पर संसद और संविधान सभा अंतिम निर्णय करें।

ग– यदि किसी प्रस्ताव पर संसद और संविधान सभा अंतिम रूप से सहमत न हों तो ग्राम संसद निर्णय करें।

घ– नई व्यवस्था होने तक यदि संसद संविधान संशोधन करे तो ग्राम संसदो की स्वीकृति अनिवार्य हो।

3. सीमा –जन जागरण। किसी भी परिस्थिति में किसी कानून का उल्लंघन नहीं किया जायेगा।

4. क्षेत्र –न्यूनतम सम्पूर्ण भारत

5. हमारी संरक्षण सभा को वीटो का अधिकार होगा।

6. संशोधन–उपरोक्त मे किसी प्रकार का कोई संशोधन जिला प्रतिनिधि, सम्मेलन से ही किया जा सकता है।

व्यापक विचार विमर्ष के बाद यह योजना बनी कि वर्ष दो हजार सत्रह के अंत तक पूरे देश के सौ लोक प्रदेशों मे एक एक बडे सम्मेलन आयोजित किये जाये। किसी लोक प्रदेश मे एक से अधिक भी सम्मेलन हो सकते है किन्तु एक होना तो अनिवार्य है। इन सम्मेलनो का स्थानीय मीडिया के माध्यम से प्रचार भी हो । इस पूरे कार्य का दायित्व श्री प्रमोद केशरी, श्री ओम प्रकाश जी दुबे तथा श्री रामवीर जी को दिया गया। इन सम्मेलनो की सफलता का ऑकलन करने के बाद जंतर मंतर की योजना बनेगी । यह दायित्व श्री ओम प्रकाश जी दुबे को दिया गया।

बीच मे मुनि जी ने निवेदन किया कि जो साथी अपना समय दान करना चाहेंगे उनके सहयोग का हम स्वागत करेंगे। ऐसे समय दानी साथियों के मार्ग व्यय या अन्य आवास आदि की चिंता कार्यालय करेगा। पांच साथियों ने समय दान की घोषणा की । रामवीर जी ने बैठकर उनके साथ व्यापक चर्चा की।

1	**हरिशंकर यादव**	**ग्राम– कालोपटटी, पो0–हथुआ, जिला–गोपालगंज, बिहार–841436**	**9931260090**	**6 महिने**
2	**राहुल चौहान**	**मकान न0–42/3 बी ग्राउंड फलोर ब्लोक –बी2 गली न0–12 रमाविहार दिल्ली 110081**	**7906472073 7830191456**	**1 वर्ष**
3	श्रीमति मरियम जमादार	महाराष्ट्र		**6 महिने**
4	अनील प्रियरंजन शर्मा	**बोशर बारी, गुवाहटी –21 डाक–वशिष्ठ कामरूम महानगर असम 781029**	**9859292757**	**6 महिने**
5	राजू गुम्बर			
6	वेद जी	दिल्ली		
7	नवीन जी	**गली न0 –6, मामूरा सेक्टर –66, नोएडा, उ0प्र0**	8447329363	**1 वर्ष**

अधिवेशन मे नीति निर्धारण समिति द्वारा बीस सदस्यों की योजना समिति का चयन किया गया। इस समिति की सामान्य बैठक कार्यालय में प्रत्येक बुधवार को नौ बजे से ग्यारह बजे तक सम्पन्न होगी। इसकी व्यवस्था प्रमोद जी करेंगे। हर तीन महिने मे इन सदस्यो की विशेष बैठक भी आयोजित होगी।

1	**आचार्य पंकज, 09219617434, 08476817434**

2	डा0 ईश्वर दयाल राजगीर बिहार, 09430601751, 07782901751
3	ओम प्रकाश दुबे, नोएडा, 09868025483,
4	ऋषिपाल सिंह यादव, बदायु, 09761458520,
5	कृष्ण लाल रुँगटा, धनबाद, 09431123154,
6	छबील सिंह सिसौदिया, हापुड, 09760459770, 09997764450
7	प्रवीण शर्मा, नोएडा, 09212605989,
8	चौधरी रतीराम शास्त्री , सहारनपुर, 09758900775
9	धर्मेन्द्र राजपूत, अकोला महाराष्ट, 07798055106,
10	रामवीर श्रेष्ठ, दिल्ली 09582057533,
11	विनोद भाई, देवघर झारखंड 09470100099,
12	सुरेश कुमार, नोएडा, 09910078250,
13	जे पी सिंह, बलिया, 09839333205,
14	राजेश कुमार द्विवेदी गोरखपुर, 9450174588
15	के बीरा स्वामी , हैदराबाद, 9949929999
16	चंदु पाटील, महाराष्ट, 9823121158
17	डा0 चंद्रशेखर प्राण, इलाहाबाद , 8400702128
18	शिवानंद जी, गुलबर्गा कर्नाटक 9035630312, 9141630312,
19	प्रमोद केसरी, रामानुजगंज, 9589856491 8826902656
20	डॉ रमेश सिंह राघव दिल्ली , 9536095386 9999158680
21	ईशम सिंह तवर कैथल, 9416111590
22	हीरा लाल शर्मा, बैगलोर, 09341122800,
23	हेमन्त कुमार शाह, अहमदाबाद , 09898075990,

क्रमांक इक्कीस बाईस और तेइस अधिवेशन में किसी कारण वश नहीं आ पाये और उनकी कोई सूचना भी नहीं मिली। फिर भी इन्हे समिति में विशेष आमंत्रित के रूप में रखने का निर्णय किया गया है।

दोपहर बाद समापन सत्र शुरू हुआ। मुनि जी ने समापन सत्र में कहा कि आज भारतीय संविधान पूरी तरह तंत्र ओर विशेषकर संसद का गुलाम सरीखा हो गया है। सबसे बड़ा खतरा है कि आज हम किसी तरह संविधान से कुछ प्राप्त भी कर ले तो जब तक संविधान संशोधन के असीम अधिकार तंत्र के पास रहेंगे तब तक हम अपने को स्वतंत्र नहीं कह सकते। इसलिये ग्राम संसद अभियान अपने आंतरिक संविधान बनाने की छूट लेकर तंत्र के हस्तक्षेप को न्यूनतम करेगा तो दूसरी ओर संविधान संशोधन में अपनी भूमिका बनाकर तंत्र की संवैधानिक मनमानी को भी नियंत्रित करेगा। यह जनजागरण लोकतंत्र को लोक नियुक्त तंत्र से बदलकर लोकनियंत्रित तंत्र की दिशा में ले

जाने वाला क्रान्तिकारी कदम है। इसे हम दूसरी आजाद का प्रस्ताव भी कह सकते है। मुनि जी ने संभावना व्यक्त की कि दो हजार चौबीस के पूर्व ही यह परिवर्तन सफल हो सकेगा ऐसी उन्हें उम्मीद है।

अंत में श्री ओम प्रकाश जी दुबे ने ग्लोब के समक्ष लोक स्वराज्य प्रार्थना कराई और उसके बाद अधिवेशन समाप्त घोषित किया गया।